दण्डि स्वामि श्री १०८ शिवरामानन्दतीर्थ

(यज्ञोपवीत संस्कार—यज्ञोपवीतधारणविधि—सन्ध्योपासनविधि-
तथा विद्वानों एवं महात्माओं की व्यवस्था)



प्राप्तिस्थान—
श्री स्वामी गंगेश्वरानन्द तीर्थ
मुमुक्षु भवन, अस्सी, काशी
मूल्य—आचरण तथा प्रचार

द्राविड स्वामि श्री १०८ शिवरामानन्दतीर्थ द्वारा

(यज्ञोपवीत संस्कार–यज्ञोपवीतधारणविधि–सन्ध्योपासनविधि-
तथा विद्वानों एवं महात्माओं की)

व्यवस्था



प्राप्तिस्थान—

श्री स्वामी गंगेश्वरानन्द तीर्थ
मुमुक्षु भवन अस्सी, काशी।
मूल्य—आचरण तथा प्रचार।

यतीन्द्रस्त्यागीशो ममगुरुवरो ब्रह्मणिपरः
सशिष्यः स्वाध्यायं प्रतिपलमजस्त्रं वितनुते ।
घनश्यामानन्दो यति मुनि बुधैर्वन्दित पदः
स्मरामस्तं नित्यं निखिलजन कल्याणनिरतम् ॥ १ ॥



स्वामीजी के जन्मस्थान का पता—श्री शिवरामानन्द तीर्थ, ग्राम धान्नगरा, पोस्ट पाली, जि० हरदोई (मिश्रवंशे जन्म)

"यतिवर श्रीशिवरामानन्दतीर्थस्य सूक्ष्मजीवनचरितम्"

काश्यांशिवपुरेरम्ये पञ्चकोश्यानिरन्तरे ।
अन्नपूर्णा ऋषिकुलं ब्रह्मचर्याश्रमं पुरा (१)
विधाय विधिवद्वर्णी वहुवर्षैश्चतद्दशाम ।
भिक्षाचर्यादिभिः क्लेशैः दृढांचक्रेऽथकीर्त्तिमान् (२)
ततः प्राज्यैर्धनैः साध्यैर्यागैःस्मार्तैर्विधानतः
पूजयित्वा हरिं नित्यं स्वात्मानंसमचिन्तयत् (३)
अकामंसच्चिदानन्दं शिवं केवलमद्वयम्
तदो पेयायविधिवद् तपोभिर्याभिरर्चितम् (४)
गुरुं ब्रह्मविदांश्रेष्ठं सोपहारोऽभ्यधात्स्पृहाम् ।
अग्रहीच्च ततः सम्यक् संन्यासं व्रतमुत्तमम् (५)
सोऽयंगङ्गातटे काश्यांशतलक्षप्रविस्तराम् ।
गायत्रीं जापयामासविद्वद्भिः शुभकर्मभिः (६)
स्वयञ्चोपनिषद्वाक्यं प्रणवञ्चापिचिन्तयन् ।
जीवब्रह्मैक्य वाक्यानां तात्पर्यंनिश्चिनोतिसः (७)



स्वामी जी की घोषणा

भू देवो आपके उत्थान से संसारका उत्थान है और आपके पतनसे संसार का पतन है। यद्यदाचरितश्रेष्ठस्तत्तदेवेतरोजनः। स यत्प्रमाणं कुरुते लोकस्तदनुवर्तते ॥ संसार आपका मुख देख रहा है जिस दिन आप मोह निद्रासे जगेंगे उसी दिनसे आपका अनुकरण लोग करेंगे और उसीसे संसार का उत्थान होना निश्चित है ब्राह्मणों ने अपने आचरण से संसार का उत्थान किया है। समय पर बालकों का व्रतबन्ध संस्कार कराओ ताकि बालक ब्राह्मण हो जाने पावें। ब्राह्मणों के घर-घर में अग्नि होत्र की अग्नि रहती रही बुझने नहीं पाती रही पर इस वक्त एक जिले में एक भी अग्नि होत्री नहीं दिखाई देते हैं। कान्यकुब्जों में अग्निहोत्री नामकी एक जाति है। अग्नि होत्र की क्या बात है संध्या गायत्री करने वाले ब्राह्मण बहुत कम दिखाई देते हैं। असत्य के व्यवहार से उसका फल असत्य ही होता है और सत्य के व्यवहार से उसका फल सत्य ही होता है। जब तक कोई कार्य न किया जाय तब तक उसका परिणाम मालूम नहीं होता जब हमारी ब्राह्मणों की यह दशा है तब क्षत्रिय वैस्य शूद्रों को हम क्या कह सकते हैं। कृपा कर आप अपने को पहिचानें।

सर्वेऽत्रसुखिनः सन्तु सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु माकश्चिद् दुःख भाग् भवेत्।

स्वामी शिवरामानन्द तीर्थ
मुमुक्षु भवन
अस्सी, वाराणसी।

यज्ञोपवीतधारण विधि

यहां आवश्यक समझकर नूतन यज्ञोपवीत धारणका समय तथा उसकी संक्षिप्त विधिका उल्लेख किया जाता है। अशौच होनेपर मूत्र-पुरीषोत्सर्ग करते समय दाहिने कानके ऊपर जनेऊ रखनेमें भूल होनेपर या उसके गिरने अथवा टूट जाने पर नूतन यज्ञोपवीत धारण करना चाहिये। उसके धारणकी संक्षिप्त विधि यह है—स्नानके अनन्तर आसन पर बैठकर आचमन करे, फिर यज्ञोपवीतको लेकर 'आपो हि ष्ठा' इस मन्त्रद्वारा जलसे उसका अभिषेक करे। तत्पश्चात् उसके नौ तन्तुओंमें क्रमशः ॐकार, अग्नि, सर्प, सोम, पितर, प्रजापति, वायु, यम और विश्वेदेवकी तथा तीन ग्रन्थियोंमें क्रमशः ब्रह्मा, विष्णु और रुद्रकी भावना करके—

यज्ञोपवीतमिति परमेष्ठी ऋषिः त्रिष्टुप्छन्दः लिङ्गोक्ता देवता श्रौतस्मार्तकर्मानुष्ठानाधिकारसिद्धये यज्ञोपवीत परिधाने विनियोगः।

—यह विनियोग पढ़े और—

ॐयज्ञोपवीतं परमं पवित्रं प्रजापतेर्यत्सहजं पुरस्तात्।
आयुष्यमग्र्यं प्रतिमुञ्च शुभ्रं यज्ञोपवीतं बलमस्तु तेजः॥
यज्ञोपवीतमसि यज्ञस्य त्वा यज्ञोपवीतंनोपनह्यामि॥

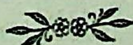
—इस मन्त्र को पढ़कर एक जोड़ा यज्ञोपवीत पहने। फिर कम-से-कम बीस वार गायत्रीमन्त्रका जप करे। बलिवैश्वदेव करनेवालेको तीन यज्ञोपवीत धारण करके कम-से-कम तीस वार गायत्रीका जप करना चाहिये इसके बाद प्राचीन यज्ञोपवीतको गलेसे बाहर निकालकर समुद्रं गच्छ स्वाहा' इस मन्त्रको पढ़कर जलाशय में फेंक दे। इस प्रकार यज्ञोपवीत धारण करनेके बाद ही संध्या आदि कर्म करने का अधिकार होता है।

मृत्तिका चन्दनं चैव भस्म तोयं चतुर्थकम् ।
एभिर्द्रव्यैर्यथाकालमूर्ध्वपुण्ड्रं भवेत सदा ।। (आह्निकप्रकाश)

यहाँ उर्ध्वपुण्ड्र शब्द तिलकके सभी प्रकारोंका उपलक्षक है, तात्पर्य यह कि तीर्थकी मिट्टी, चन्दन, भस्म अथवा जल—इन द्रव्योंसे समयानुसार सदा ऊर्ध्वपुण्ड्र, त्रिपुण्ड्र आदि किया जाता है। [चन्दन देवताका प्रसाद ही धारण करे। केवल अपने लिये नहीं घिसना चाहिये।]

कुछ लोग भस्म और चन्दनमें गायत्रीमन्त्रका उपयोग करते हैं। सम्प्रदायनिष्ठ पुरुषोंको अपनी सम्प्रदाय-मर्यादाके अनुसार मन्त्रोंका उपयोग करना चाहिये। सर्वसाधारण स्मार्त पुरुषोंके लिये भस्मधारणका मन्त्र यहाँ लिखा जाता है—

ॐ अग्निरिति भस्म वायुरिति भस्म जलमिति भस्म स्थलमिति भस्म व्योमेति भस्म सर्व ँ ् हवाइद ँ ् भस्ममन एतानि चक्षू ँ ् षि' इस मन्त्रसे भस्मको अभिमन्त्रित करके 'त्र्यायुषं जमदग्नेः' इस मन्त्रसे ललाटमें, 'कस्यपस्य त्र्यायुषम्' इस मन्त्रसे गलेमें, 'यद्देवेषु त्र्यायुषम्' इस मन्त्रसे दोनों भुजाओंके मूलमें और 'तन्नोऽस्तु त्र्यायुषम्' इस मन्त्रसे हृदयमें लगावे।



श्रीहरिः

संध्योपासनविधि

ब्राह्म मुहूर्त में जब चार घड़ी रात बाकी रहे, शयनसे उठकर भगवान्‌का स्मरण करे, फिर शौच-स्नानके अनन्तर शुद्ध वस्त्र धारण करके पवित्र तथा एकान्त-स्थानमें कुश अथवा कम्बल आदिके आसनपर पूर्व, ईशान अथवा उत्तर दिशाकी ओर मुँह करके बैठे [तीनों कालकी संध्यामें उपर्युक्त दिशाओंकी ओर ही मुँह करके बैठना चाहिये, केवल सूर्यार्घ्यदान, सूर्योपस्थान, और गायत्रीजप सूर्याभिमुख होकर करना आवश्यक है] बायें हाथमें तीन कुश और दायें हाथमें दो कुशों की बनी हुई पवित्री 'ॐ पवित्रे स्थो वैष्णव्यौ' इस मन्त्र से धारण करे। कुशके अभावमें सोने, चाँदी अथवा तांबे की अंगूठी पहनकर भी कार्य किया जा सकता है। ओंकार और व्याहृतियोंसहित गायत्री-मन्त्रका उच्चारण करके शिखा बाँध ले, यदि पहलेसे ही शिखा बँधी हो तो उसका स्पर्शमात्र कर ले। एक जोड़ा शुद्ध यज्ञोपवीत धारण किये रहना आवश्यक है। देह पर धौतवस्त्रके अतिरिक्त एक उत्तरीय वस्त्र(चादर या गमछा आदि) डाले रहना चाहिये। उत्तरीय वस्त्रके अभाव में एक और यज्ञोपवीत (कुल मिलाकर तीन यज्ञोपवीत) धारण किये रहे; फिर किसी पात्रमें शुद्ध जल रखकर उसे बायें हाथमें उठा ले और दायें हाथ के कुशसे अपने शरीरपर जल सींचते हुए निम्नाङ्कित मन्त्र पढ़े—

ॐ अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा ।
यः स्मरेत्पुण्डरीकाक्षं स बाह्याभ्यन्तरः शुचिः ॥

'मनुष्य अपवित्र हो या पवित्र अथवा किसी भी दशामें स्थित हो, जो पुण्डरीकाक्ष (कमलनयन) भगवान् विष्णुका स्मरण करता है, वह बाहर और भीतर सब ओर से शुद्ध हो जाता है।'

फिर नीचे लिखे मन्त्रसे आसनपर जल छिड़ककर दायें हाथसे उसका स्पर्श करे—

ॐ पृथ्वि त्वया धृता लोका देवि त्वं विष्णुना धृता।
त्वं च धारय मां देवि पवित्रं कुरु चासनम्॥

हे पृथ्वि देवि! तुमने सम्पूर्ण लोकोंको धारण कर रक्खा है और भगवान् विष्णुने तुमको धारण किया है। हे देवि! तुम मुझे धारण करो और मेरे आसनको पवित्र कर दो।

इसके बाद यथारुचि शास्त्रानुकूल भस्म-चन्दन आदिका तिलक करे।

तत्पश्चात् 'ॐ केशवाय नमः स्वाहा' 'ॐ नारायणा नमः स्वाहा' 'ॐ माधवाय नमः स्वाहा'—इन तीनों मन्त्रोंको पढ़कर प्रत्येकसे एक-एक बार [कुल तीन बार] पवित्र जलसे आचमन करे [आचमनके समय हाथ जानुओंके भीतर हो, पूर्व, ईशान या उत्तर दिशाकी ओर ही मुख हो। ब्राह्मण इतना जल पीये, जो हृदयतक पहुँच सके; क्षत्रिय उतना ही जल ग्रहण करे जो कण्ठ तक पहुँच सके, वैश्य इतना जल ले जो तालूतक जा सके। उस समय ओठ बहुत न खोले, अङ्गुलियाँ परस्पर सटी रहें। अङ्गुष्ठ और कनिष्ठिका अलग रहे। खड़ा न हो, हँसता न रहे। जलमें फेन या बुलबुले आदि न हों]। ब्राह्मतीर्थसे तीन बार आचमन करनेके पश्चात् 'ॐ गोविन्दाय नमः' यह मन्त्र पढ़कर हाथ धो ले। इसके बाद दो बार अंगूठेके

मूलसे ओठको पोंछे, फिर हाथ धो ले अंगूठेका मूल ब्राह्मतीर्थ है। तत्पश्चात् भीगी हुई अङ्गुलियोंसे मुख आदिका स्पर्श करे। मध्यमा-अनामिकासे मुख, तर्जनी-अङ्गुष्ठसे नासिका, मध्यमा-अङ्गुष्ठसे नेत्र, अनामिका अङ्गुष्ठसे कान, कनिष्ठिका-अङ्गुष्ठसे नाभि, दाहिने हाथसे हृदय, सब अङ्गुलियोंसे सिर, पाँचों अङ्गुलियोंसे दाहिनी बाँह और बायीं बाँहका स्पर्श करना चाहिये।

तदनन्तर हाथमें जल लेकर निम्नाङ्कित संकल्प पढ़कर वह जल भूमिपर गिरा दे—

हरिः ॐ तत्सदद्यैतस्य श्रीब्रह्मणो द्वितीयपरार्धे श्रीश्वेतवाराहकल्पे जम्बूद्वीपे भरतखण्डे आर्यावर्तैकदेशान्तर्गते पुण्यक्षेत्रे कलियुगे कलिप्रथमचरणे अमुकसंवत्सरे[1] अमुकमासे अमुकपक्षे अमुकतिथौ अमुकवासरे अमुकगोत्रोत्पन्नः अमुकशर्मा[2] अहं ममोपात्तदुरितक्षयपूर्वकं श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं प्रातः [सायं अथवा मध्याह्न-] संध्योपासनं करिष्ये।

इसके बाद हाथमें जल ले निम्नाङ्कित विनियोग पढ़े—

ऋतं चेति त्र्यृचस्य माधुच्छन्दसोऽघमर्षण ऋषिरनुष्टुप्छन्दो भाववृत्तं दैवतमपामुपस्पर्शने विनियोगः।

फिर नीचे लिखे मन्त्रको एक बार पढ़कर एक ही बार आचमन करे—

---

१. 'अमुक' शब्दके स्थानमें संवत्सर, मास आदिका नाम जोड़ लेना चाहिये।

२. ब्राह्मण अपने नामके आगे शर्मा, क्षत्रिय वर्मा और वैश्य गुप्तशब्दका प्रयोग करे।

ॐ ऋतंञ्च सत्यञ्चाभीद्धात्तपसोऽध्यजायत ततो रात्र्यजायत ततः समुद्रो अर्णवः। समुद्रादर्णवादधिसंवत्सरो अजायत अहोरात्राणि विदधद्विश्वस्य मिषतो वशी। सूर्याचन्द्रमसौ धाता यथापूर्वमकल्पयत्। दिवञ्च पृथिवीञ्चान्तरिक्षमथो स्वः।
(ऋ० अ० ८ अ० ८ व० ४८)

[महाप्रलयके बाद इस महाकल्पके आरम्भमें] सब ओरसे प्रकाशमान तपरूप परमात्मासे ऋत (सत्संकल्प) और सत्य (यथार्थ भाषण) की उत्पत्ति हुई। उसी परमात्मासे †रात्रि-दिन प्रकट हुए तथा उसीसे जलमय समुद्रका आविर्भाव हुआ। जलमय समुद्रकी उत्पत्तिके पश्चात् दिनों और रात्रियोंको धारण करनेवाला कालस्वरूप संवत्सर प्रकट हुआ जो कि पलक मारनेवाले जङ्गम प्राणियों और स्थावरोंसे युक्त समस्त संसारको अपने अधीन रखनेवाला है। और इसके बाद सबको धारण करनेवाले परमेश्वरने सूर्य, चन्द्रमा, दिव् (स्वर्गलोक) पृथ्वी, अन्तरिक्ष तथा महर्लोक आदि लोकोंकी भी पूर्वकल्पके अनुसार सृष्टि की।

तदनन्तर प्रणवपूर्वक गायत्री-मन्त्र पढ़कर रक्षाके लिये अपने चारों ओर जल छिड़के। फिर नीचे लिखे विनियोग को पढ़े—

ॐकारस्य ब्रह्म ऋषिर्दैवी गायत्री छन्दः परमात्मा देवता, सप्तव्याहृतीनां प्रजापतिऋषिर्गायत्र्युष्णिगनुष्टुब्बृहतीपङ्क्तित्रिष्टुब्जगत्यश्छन्दांस्यग्निवायुसूर्यबृहस्पतिवरुणेन्द्रविश्वेदेवा देवताः, तत्सवितुरिति विश्वामित्र[1] ऋषिर्गायत्री छन्दः सविता

---

† यहाँ रात्रि-दिन शब्दसे ब्रह्माकी रात्रि और दिन समझने चाहिये।

१. 'विश्वस्य जगतो मित्रं विश्वामित्रः प्रजापतिः।' इस वचनके अनुसार विश्वामित्र शब्दका अर्थ प्रजापति (ब्रह्मा) है।

देवता, आपोज्योतिरिति शिरसः प्रजापतिर्ऋषिर्यजुश्छन्दो ब्रह्माग्निवायुसूर्या देवताः प्राणायामे विनियोगः ।

इसके पश्चात् आँखें बंद करके नीचे लिखे मन्त्रसे प्राणायाम करे। उसकी विधि इस प्रकार है—पहले दाहिने हाथके अंगूठेसे नासिकाका दायाँ छिद्र बंद करके बायें छिद्रसे वायुको अंदर खींचे, साथ ही नाभिदेशमें नीलकमलदलके समान श्यामवर्ण चतुर्भुज भगवान विष्णुका ध्यान करते हुए प्राणायाम-मन्त्रका तीन बार पाठ कर जाय [यदि तीन बार मन्त्र-पाठ न हो सके तो एक ही बार पाठ करे और अधिकके लिये अभ्यास बढ़ावे]—इसको पूरक कहते हैं। पूरकके पश्चात् अनामिका और कनिष्ठिका अङ्गुलियोंसे नासिकाके बायें छिद्रको भी बंद करके तबतक श्वासको रोके रहे जबतक कि प्राणायाम-मन्त्रका तीन बार [या शक्तिके अनुसार एक बार] पाठ न हो जाय, इस समय हृदयके बीच कमलके आसनपर विराजमान अरुण-गौर-मिश्रित वर्णवाले चतुर्मुख ब्रह्माजीका ध्यान करे। यह कुम्भक-क्रिया है। इसके बाद अंगूठा हटाकर नासिकाके दाहिने छिद्रसे वायुको धीरे-धीरे तबतक बाहर निकाले, जबतक प्राणायाममन्त्र का तीन [या एक] बार पाठ न हो जाय। इस समय शुद्ध स्फटिकके समान श्वेत वर्णवाले त्रिनेत्रधारी भगवान् शङ्करका ध्यान करे। यह रेचक-क्रिया है। यह सब मिलकर एक प्राणायाम कहलाता है। प्राणायामका मन्त्र यह है—

ॐ भूः ॐ भुवः ॐ स्वः ॐ महः ॐ जनः ॐ तपः ॐ सत्यम् ॐ तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात् । ॐ आपो ज्योती रसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवः स्वरोम् ॥ (तै० आ० प्र० १० अ० १७)

हम स्थावर-जङ्गमरूप सम्पूर्ण विश्वको उत्पन्न करनेवाले उन निरतिशय प्रकामय परमेश्वरके भजने योग्य तेजका ध्यान करते हैं, जो कि हमारी बुद्धियोंको सत्कर्मोंकी ओर प्रेरित करते हैं और जो भू, भुवर, स्वर, महर, जन, तपः और सत्य नामवाले समस्त लोकोंमें व्याप्त हैं; तथा जो सच्चिदानन्दस्वरूप जलरूप से जगत्का पालन करनेवाले, अनन्त तेजके धाम, रसमय, अमृतमय और भूर्भुवःस्वःस्वरूप (त्रिभुवनात्मक) ब्रह्म है।

फिर नीचे लिखा विनियोग पढ़े—

सूर्यश्च मेति नारायण ऋषिःप्रकृतिश्छन्दः सूर्यमन्युमन्यु-पतयो रात्रिश्च देवताअपामुपस्पर्शने विनियोगः।

तत्पश्चात् निम्नाङ्कित मन्त्रको एक वार पढ़कर एक वार आचमन करे—

ॐसूर्यश्च मा मन्युश्च मन्युपतयश्च मन्यु कृतेभ्यः पापेभ्यो रक्षन्ताम्। यद्रात्र्या पापमकार्षं मनसा वाचा हस्ताभ्यां पद्भ्यामुदरेण शिश्ना रात्रिस्तदवलुम्पतु। यत्किञ्च दुरितं मयि इदमहं माममृतयोनौ सूर्ये ज्योतिषि जुहोमि स्वाहा॥

(तै० आ० प्र० १० अ० २५)

सूर्य, क्रोधके अभिमानी देवता और क्रोधके स्वामी—ये सभी क्रोधवश किये हुए पापोंसे मेरी रक्षा करें [अर्थात् कृत पापोंको नष्ट करके होनेवाले पापों से बचावें]। रातमें मैंने मन, वाणी हाथ, पैर, उदर और शिश्न (उपस्थ) इन्द्रियसे जो पाप किये हों, उन सबको रात्रिकालाभिमानी देवता नष्ट करें। जो कुछ भी पाप मुझमें वर्तमन है इसको और इसके कर्तृत्वका अभिमान रखने-वले अपनेको मैं मोक्षके कारणभूत प्रकाशमय सूर्यरूप परमेश्वर

में हवन करता हूँ [अर्थात् हवनके द्वारा अपने समस्त पाप और अहंकारको भस्म करता हूँ] इसका भलीभाँति हवन हो जाय।

उपर्युक्त आचमन-मन्त्र प्रातःकालकी संध्याका है। मध्याह्न और सायंकलके केवल आचमन-मन्त्र प्रातःकालसे भिन्न हैं। मध्याह्न का विनियोग और मन्त्र इस प्रकार है—

आपः पुनन्त्विति नारायण ऋषिरनुष्टुप् छन्द आपः पृथिवी ब्रह्मणस्पतिर्ब्रह्म च देवता अपामुपस्पर्शने विनियोगः।

इस विनियोगको पढ़े। फिर नीचे लिखे मन्त्रको एक बार पढ़कर एक वार आचमन करे—

ॐ आपः पुनन्तु पृथिवीं पृथिवी पूता पुनातु माम्। पुनन्तु ब्रह्मणस्पतिर्ब्रह्मपूता पुनातु माम्॥ यदुच्छिष्टमभोज्यं च यद्वा दुश्चरितं मम। सर्वं पुनन्तु मामापोऽसतां च प्रतिग्रह ँ स्वाहा॥

(तै० आ० प्र० १० अ० २३)

जल पृथिवीको [प्रोक्षण आदिके द्वारा] पवित्र करे। पवित्र हुई पृथिवी मुझे पवित्र करे। वेदोंके पति परमात्मा मुझे शुद्ध करें। मैंने जो कभी किसी भी प्रकारका उच्छिष्ट या अभक्ष्य भक्षण किया हो, अथवा इसके अतिरिक्त भी मेरे जो पाप हों उन सबको दूर करके जल मुझे शुद्ध कर दे तथा नीच पुरुषोंसे लिये हुए दानरूप दोपको भी दूर करके जल मुझे पवित्र करे। पूर्वोक्त सभी दोषों का भलीभाँति हवन हो जाय।

सायंकालके आचमनका विनियोग और मन्त्र इस प्रकार है—

अग्निश्च मेति नारायण ऋषिःप्रकृतिश्छन्दोऽग्निमन्यु-मन्युपतयोऽहश्च देवता अपामुपस्पर्शने विनियोगः।

इस विनियोगको पढ़े। फिर नीचे लिखे मन्त्रको एक वार पढ़कर एक वार आचमन करे—

ॐ अग्निश्च मा मन्युश्च मन्युपतयश्च मन्युकृतेभ्यः पापेभ्यो रक्षन्ताम्। यदह्ना पापमकार्षं मनसा वाचा हस्ताभ्यां पद्भ्यामुदरेण शिश्ना अहस्तदवलुम्पतु। यत्किञ्च दुरितं मयि इदमहं माममृतयोनौ सत्ये ज्योतिषि जुहोमि स्वाहा ॥

(तै० आ० प्र० १० अ० २४)

अग्नि, क्रोधके अभिमानी देवता और क्रोधके स्वामी—ये सभी क्रोधवश किये हुए पापोंसे मेरी रक्षा करें [अर्थात् कृत पापोंको नष्ट करके होनेवाले पापोंसे बचायें]। मैंने दिनमें मन, वाणी, हाथ, पैर, उदर और शिश्न (उपस्थ) इन्द्रियसे जो पाप किये हों उन सबको दिनके अभिमानी देवता नष्ट करें। जो कुछ भी पाप मुझमें वर्तमान है, इसको तथा इसके कर्तृत्वका अभिमान रखनेवाले अपनेको मैं मोक्षके कारणभूत सत्यस्वरूप प्रकाशमय परमेश्वरमें हवन करता हूँ। [अर्थात् हवनके द्वारा अपने सारे पाप और अहंकारको भस्म करता हूँ] इसका भलीभाँति हवन हो जाय।

फिर निम्नाङ्कित विनियोगको पढ़े—

आपो हि ष्ठेति त्र्यृचस्य सिन्धुदीप ऋषिर्गायत्री छन्द आपो देवता मार्जने विनियोगः।

इसके पश्चात् निम्नाङ्कित तीन ऋचाओंके नौ चरणोंमें से सात चरणोंको पढ़ते हुए सिरपर जल सींचे, आठवेंसे पृथ्वीपर जल डाले और फिर नवें चरणको पढ़कर सिरपर ही जल सींचे। यह मार्जन तीन कुशों अथवा तीन अङ्गुलियोंसे करना चाहिये। मार्जनमन्त्र ये हैं—

ॐ आपो हि ष्ठा मयोभुवः। ॐ ता न ऊर्जे दधातन। ॐ महे रणाय चक्षसे। ॐ यो वः शिवतमो रसः। ॐ तस्य भाजयतेह नः। ॐ उशतीरिव मातरः। ॐ तस्मा अरं गमाम वः। ॐ यस्य क्षयाय जिन्वथ। ॐ आपो जनयथा च नः।

(यजु० अ० ११ मन्त्र ५०, ५१, ५२)

हे जल! तुम निश्चय ही कल्याणकारी हो, अतः [अन्नादि रसोंके द्वारा] बलकी वृद्धिके लिये तथा अत्यन्त रमणीय परमात्मदर्शनके लिये तुम हमारा पालन करो। जिस प्रकार पुत्रोंकी पुष्टि चाहनेवाली माताएँ उन्हें अपने स्तनोंका दुग्ध पान कराती हैं, उसी प्रकार तुम्हारा जो परम कल्याणमय रस है, उसके भागी हमें बनाओ। हे जल! जगत्के जीवनाधारभूत जिस रसके एक अंशसे तुम समस्त विश्वको तृप्त करते हो उस रसकी पूर्णताको हम प्राप्त हों [अर्थात् उस रससे हम पूर्णतया तृप्ति लाभ करें]। हे जल! तुम हमें उस रसके भोक्ता बनाओ [अर्थात् उसे भोगनेकी क्षमता दो]।

तदनन्तर नीचे लिखे विनियोगको पढ़े—

द्रुपदादिवेत्यश्विसरस्वतीन्द्रा ऋषयोऽनुष्टुप्छन्द आपो देवताः शिरस्सेके विनियोगः।

फिर बायें हाथमें जल लेकर उसे दाहिने हाथसे ढक ले और नीचे लिखे मन्त्रसे अभिमन्त्रित करके उसे सिरपर छिड़क दे—

ॐ द्रुपदादिव मुमुचानः स्विन्नः स्नातो मलादिव। पूतं पवित्रेणैवाज्यमापः शुन्धन्तु मैनसः॥ (यजु० अ० २० मं० २०)

जैसे पादुकासे अलग होता हुआ मनुष्य पादुकाके मलादि दोषोंसे मुक्त हो जाता है, जिस प्रकार पसीनेसे भींगा हुआ पुरुष

स्नान करनेके पश्चात् मैलसे रहित होता है तथा जैसे पवित्रक आदिसे घी शुद्ध हो जाता है उसी प्रकार जल मुझे पापोंसे शुद्ध करे। [अर्थात् मुझे सर्वथा निष्पाप कर दे]।

पुनः निम्नाङ्कित विनियोग-वाक्यको पढ़े—

ऋतञ्चेति त्र्यृचस्य माधुच्छन्दसोऽघमर्षण ऋषिरनुष्टुप् छन्दो भाववृत्तं दैवतमघमर्षणे विनियोगः।

फिर दाहिने हाथमें जल लेकर नासिकामें लगावे और [यदि सम्भव हो तो श्वास रोककर] नीचे लिखे मन्त्रको तीन बार या एक बार पढ़ते हुए मन-ही-मन यह भावना करे कि यह जल नासिकाके दायें छिद्रके भीतर घुसकर अन्तःकरणके पापको बायें छिद्रसे निकाल रहा है, फिर उस जलकी ओर दृष्टि न डालकर अपनी बायीं ओर फेंक दे] अथवा वाम-भागमें शिलाकी भावना करके उसपर उस पापको पटककर नष्ट कर देनेकी भावना करे]। अघमर्षण मन्त्र इस प्रकार है—

ऋतञ्च सत्यञ्चाभीद्धात्तपसोऽध्यजायत। ततो रात्र्यजायतततःसमुद्रो अर्णवः। समुद्रादर्णवादधिसंवत्सरो अजायत। अहोरात्राणि विदधद्विश्वस्य मिषतो वशी। सूर्याचन्द्रमसौधाता यथापूर्वमकल्पयत्। दिवञ्च पृथिवीञ्चान्तरिक्षमथो स्वः॥*

(ऋ० अ० ८ अ० ८ व० ४८)

इसके पश्चात् नीचे लिखे विनियोग वाक्यका पाठ करे—

अन्तश्चरसीति तिरश्चीन ऋषिरनुष्टुप्छन्दः आपो देवता अपामुपस्पर्शने विनियोगः।

---

* इस मन्त्रका अर्थ पृष्ठ ७, ८ में दिया जा चुका है।

फिर निम्नाङ्कित मन्त्रको एक बार पढ़कर एकबार आचमन करे—

ॐ अन्तश्चरसि भूतेषु गुहायां विश्वतोमुखः।
त्वं यज्ञस्त्वं वषट्कार आपोज्योती रसोऽमृतम्॥

(कात्यायनपरिशिष्टसूत्र)

हे जलरूप परमात्मन्। तुम समस्त प्राणियोंके भीतर उनकी हृदयरूप गुहामें विचरते हो, तुम्हारा सब ओर मुख है, तुम्हीं यज्ञ हो, तुम्हीं वषट्कार (इन्द्रादिका भाग हविष्य) हो और तुम्हीं जल, प्रकाश, रस एवं अमृत हो।

तदनन्तर नीचे लिखे विनियोग-वाक्यका पाठमात्र करे—

ॐकारस्य ब्रह्म ऋषिर्दैवी गायत्रीछन्दःपरमात्मा देवता, तिसृणां महाव्याहृतीनां प्रजापतिर्ऋषिर्गायत्र्युष्णिगनुष्टुभश्छन्दांस्यग्निवायुसूर्या देवताः, तत्सवितुरिति विश्वामित्र ऋषिर्गायत्री छन्दः सविता देवता सूर्यार्घ्यदाने विनियोगः।

फिर सूर्यके सामने एक चरणकी एँडी (पिछला भाग) उठाये हुए अथवा एक पैरसे खड़ा होकर या एक पैरके आधे भागसे खड़ा हो ॐकार और व्याहृतियोंसहित गायत्री मन्त्रको तीन बार पढ़कर पुष्प मिले हुए जलसे सूर्यको तीन बार अर्घ्य दे। प्रातःकाल और मध्याह्नका अर्घ्य जलमें देना चाहिये, यदि जल न हो तो स्थलको भलीभाँति जलसे धोकर उसीपर अर्घ्यका जल गिरावे। परंतु सायंकालका अर्घ्य कदापि जलमें न दे। खड़ा होकर अर्घ्य देनेका नियम केवल प्रातः और मध्याह्नकी संध्यामें है, सायंकालमें तो बैठकर भूमिपर ही अर्घ्य-जल गिराना चाहिये। मध्याह्नकी संध्यामें एक ही बार अर्घ्य देना चाहिये और प्रातः एवं सायं-संध्यामें तीन-तीन बार। सूर्यार्घ्य देनेका मन्त्र [अर्थात् प्रणव-व्याहृतिसहित गायत्री-मन्त्र] इस प्रकार है—

ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात् ।* (यजु० ३६ । ३)

इस मन्त्रको पढ़कर 'ब्रह्मस्वरूपिणे सूर्यनारायणाय इदमर्घ्यं दत्तं न मम' ऐसा कहकर प्रातःकाल अर्घ्य समर्पण करे ।[१]

तदनन्तर नीचे लिखे वाक्यको पढ़कर विनियोग करे—

उद्वयमिति प्रस्कण्व ऋषिरनुष्टुप्छन्दः सूर्यो देवता, उदुत्यमिति प्रस्कण्व ऋषिर्निचृद्गायत्री छन्दः सूर्यो देवता, चित्रमिति कुत्साङ्गिरस ऋषिस्त्रिष्टुप्छन्दः सूर्यो देवता, तच्चक्षुरिति दध्यङ्ङाथर्वण ऋषिरेकाधिका ब्राह्मी त्रिष्टुप्छन्दः सूर्यो देवता सूर्योपस्थाने विनियोगः ।

तदनन्तर प्रातःकालमें खड़ा होकर और सायंकालमें बैठे हुए ही अञ्जलि बाँधकर तथा मध्याह्नकालमें खड़ा हो दोनों भुजाएँ ऊपर उठाकर [यदि सम्भव हो तो] सूर्यकी ओर देखते हुए 'उद्वयम्' इत्यादि चार मन्त्रोंको पढकर उन्हें प्रणाम करे । फिर अपने स्थान पर ही सूर्यदेवकी एक बार प्रदक्षिणाकरते हुए नमस्कार करके बैठ जाय । [मध्याह्नकालमें गायत्री-मन्त्र, विभ्राट्-अनुवाक, पुरुषसूक्त, शिवसंकल्प और मण्डलब्राह्मणका भी यथासम्भव पाठ करना चाहियेॐ] ।

---

* गायत्री-मन्त्रका अर्थ आगे पृष्ठ २०, २१ में देखिये ।

१. मध्याह्नकालमें 'ब्रह्मस्वरूपिणे' के स्थानमें 'रुद्रस्वरूपिणे' और सायंकालमें विष्णुस्वरूपिणे' ऐसा परिवर्तन कर लेना चाहिये ।

ॐ*गायत्र्या च यथाशक्ति विभ्राडित्यनुवाकपुरुषसूक्तशिवसंकल्पमण्डलब्राह्मणैरित्युपस्थाय प्रदक्षिणीकृत्य नमस्कृत्योपविशेत् ।*

(का० सू० क० २)

ॐउद्वयं तमसस्परि स्वः पश्यन्त उत्तरम् । देवं देवत्रा सूर्यमगन्म ज्योतिरुत्तमम् । (यजु० अ० ७ म० ४१)

हम अन्धकारसे ऊपर उठाकर उत्तम स्वर्गलोकको तथा देवताओंमें अत्यन्त उत्कृष्ट सूर्यदेवको भलीभाँति देखते हुए उस सर्वोत्तम ज्योतिर्मय परमात्माको प्राप्त हों ।

ॐ उदु त्यं जातवेदसं देवं वहन्ति केतवः । दृशे विश्वाय सूर्यम् ॥ (यजु० अ० ७ म० ४१)

उत्पन्न हुए समस्त प्राणियोंके ज्ञाता उन सूर्यदेवको छन्दोमय अश्व सम्पूर्ण जगतको उनका दर्शन कराने [या दृष्टि प्रदान करने] के लिये ऊपर-ही-ऊपर शीघ्रगतिसे लिये जा रहे हैं ।

ॐ चित्रं देवानामुदगादनीकं चक्षुर्मित्रस्य वरुणस्याग्नेः आप्रा द्यावापृथिवी अन्तरिक्षꣳ सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुषश्च ॥ (यजु० अ० ७ मं० ४२)

जो तेजोमयी किरणोंके पुञ्ज हैं, मित्र, वरुण तथा अग्नि आदि देवताओं एवं समस्त विश्वके नेत्र हैं और स्थावर तथा जंगम—सबके अन्तर्यामी आत्मा हैं, वे भगवान् सूर्य आकाश, पृथिवी और अन्तरिक्ष-लोकको अपने प्रकाशसे पूर्ण करते हुए आश्चर्यरूपसे उदित हुए हैं ।

ॐतच्चक्षुर्देवहितं पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत् । पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शतꣳ शृणुयाम शरदः शतं प्रब्रवाम शरदः शतमदीनाः स्याम शरदः शतं भूयश्च शरदः शतात् ॥ (यजु० अ० ३६ मं० २४)

देवता आदि सम्पूर्ण जगत्का हित करनेवाले और सबके नेत्ररूप वे तेजोमय भगवान् सूर्य पूर्व दिशासे उदित हो रहे हैं ।

[उनके प्रसादसे] हम सौ वर्षोंतक देखते रहें, सौ वर्षोंतक जीते रहें, सौ वर्षोंतक सुनते रहें, सौ वर्षोंतक हममें बोलनेकी शक्ति रहे तथा सौ वर्षोंतक हम कभी दीन-दशाको न प्राप्त हों। इतना ही नहीं, सौ वर्षोंसे अधिक कालतक भी हम देखें, जीवें, सुनें, बोलें एवं कभी दीन न हों।

इसके बाद—

तेजोऽसीति धामनामासीत्यस्य च परमेष्ठी प्रजापतिर्ऋषिर्यजुस्त्रिष्टुबृगुष्णिहौ छन्दसी सविता देवता गायत्र्यावाहने विनियोगः।

इस विनियोगको पढ़कर निम्नाङ्कित मन्त्रसे विनयपूर्वक गायत्रीदेवीका आवाहन करे—

ॐ तेजोऽसि शुक्रमस्यमृतमसि। धामनामासि प्रियं देवानामनाधृष्टं देवयजनमसि॥ (यजु० अ० १। ३१)

सूर्यस्वरूपा गायत्री देवि! तुम देदीप्यमान तेजोमयी हो, शुद्ध हो और अमृत (नित्य ब्रह्मरूपा) हो। तुम्हीं परम धाम और नामरूपा हो। तुम्हारा किसीसे भी पराभव नहीं होता। तुम देवताओंकी प्रिय और उनके यजनकी साधनभूत हो [मैं तुम्हारा आवाहन करता हूँ]

फिर नीचे लिखे विनियोग-वाक्यको पढ़े—

गायत्र्यसीति विवस्वान् ऋषिः स्वराण्महापङ्क्तिश्छन्दः परमात्मा देवता गायत्र्युपस्थाने विनियोगः।

तत्पश्चात् नीचे लिखे मन्त्रसे गायत्रीको प्रणाम करे—

ॐ गायत्र्यस्येकपदी द्विपदी त्रिपदी चतुष्पद्यपदसि न हि पद्यसे नमस्ते तुरीयाय दर्शताय पदाय परोरजसेऽसावदो मा प्रापत्॥ (बृहदारण्यक० ५। १४७)

हे गायत्रि! तुम त्रिभुवनरूप प्रथम चरणसे एकपदी हो। ऋक्, यजुः एवं सामरूप द्वितीय चरणसे द्विपदी हो। प्राण, अपान तथा व्यानरूप तृतीय चरणसे त्रिपदी हो और तुरीय ब्रह्मरूप चतुर्थ चरणसे चतुष्पदी हो। निर्गुण स्वरूपसे अचिन्त्य होनेके कारण तुम 'अपद्' हो [इसीलिये वेद 'नेति-नेति' कहकर तुम्हारे स्वरूपका वर्णन करते हैं]। अतएव मन-बुद्धिके अगोचर होनेसे तुम सबके लिये प्राप्त नहीं हो। तुम्हारे दर्शनीय (अनुभव करनेयोग्य) चतुर्थ पदको, जो प्रपञ्चसे परे वर्तमान शुद्ध परब्रह्म-स्वरूप है, नमस्कार है। तुम्हारी प्राप्तिमें विघ्न डालनेवाले वे राग-द्वेष, काम-क्रोध आदिरूप पाप मेरे पास न पहुँच सकें [अर्थात् परब्रह्मस्वरूपिणी तुमको मैं निर्विघ्न प्राप्त करूँ।*]

इसके अनन्तर नीचे लिखे विनियोग-वाक्यको पढ़े—

ॐकारस्य ब्रह्म ऋषिर्दैवी गायत्री छन्दः परमात्मा

---

*इस मन्त्रका दूसरा अर्थ इस प्रकार भी हो सकता है—

हे गायत्री देवि! तुम समग्र ब्रह्मरूपा होनेके कारण एक पदवाली हो [अर्थात् जो कुछ है वह ब्रह्मरूप ही है, इस न्यायसे तुम एक पदवाली हो]। सगुण-निर्गुणरूपा होनेसे तुम दो पदोंवाली हो। ब्रह्मा, विष्णु और शिवरूपसे तीन पदोंवाली हो। विराट्, हिरण्यगर्भ, ईश्वर और परब्रह्मरूपा होनेके कारण तुम चार पदोंवाली हो। अचिन्त्य होनेसे तुम 'अपद्' हो, अतएव सबके लिये तुम प्राप्य नहीं हो। तुम्हारे दर्शनीय (अनुभव करने योग्य) चतुर्थ पदको, जो प्रपञ्चसे परे वर्तमान शुद्ध परब्रह्मस्वरूप है, नमस्कार है। तुम्हारी प्राप्तिमें विघ्न डालनेवाले वे राग-द्वेष काम-क्रोध आदि रूप पाप मेरे पास न पहुँच सकें [अर्थात् परब्रह्मस्वरूपिणी तुमको मैं निर्विघ्न प्राप्त करूँ]।

देवता, तिसृणां महाव्याहृतीनां प्रजापतिर्ऋषिर्गायत्र्युष्णिगनुष्टुभश्छन्दांस्यग्निवायुसूर्या देवताः, तत्सवितुरिति विश्वामित्र ऋषिर्गायत्री छन्दः सविता देवता जपे विनियोगः ।

फिर नीचे लिखे अनुसार गायत्री-मन्त्रका कम-से-कम १०८ बार माला आदिसे गिनते हुए जप करे। अधिक जहाँतक हो अच्छा है। जपके समय गायत्रीके तेजोमय स्वरूपका ध्यान और मन्त्रके अर्थका अनुसंधान होता रहे तो बहुत ही उत्तम है। गायत्री-मन्त्र इस प्रकार है—

ॐभूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात् ॐ। (यजु० अ० ३६ मं० ३)

हम स्थावर-जङ्गमरूप सम्पूर्ण विश्वको उत्पन्न करनेवाले उन निरतिशय प्रकाशमय परमेश्वरके भजनेयोग्य तेजका ध्यान करते हैं जो हमारी बुद्धियोंको सत्कर्मोंकी ओर प्रेरित करते हैं तथा जो भूर्लोक, भुवर्लोक और स्वर्गलोकरूप सच्चिदानन्द परब्रह्म हैं।*

तदनन्तर नीचे लिखे विनियोग-वाक्यका पाठ करे—

विश्वतश्चक्षुरिति भौवन ऋषिस्त्रिष्टुप्छन्दो विश्वकर्मा देवता सूर्यप्रदक्षिणायां विनियोगः।

---

* इस मन्त्रका अर्थ ऐसा भी है--

सच्चिदानन्द, विराटस्वरूप, सब संसारको उत्पन्न करनेवाले परमेश्वरके उस भजने योग्य तेजका हमलोग ध्यान करते हैं जो हमलोगोंकी बुद्धियोंको अपने स्वरूपमें लगावें।

प्रदक्षिणाका पौराणिक श्लोक इस प्रकार है—

यानि कानि च पापानि जन्मान्तरकृतानि च।
तानि तानि प्रणश्यन्ति प्रदक्षिणपदे पदे॥

फिर नीचे लिखे मन्त्रसे अपने स्थानपर खड़े होकर सूर्यदेवकी एक बार प्रदक्षिणा करे—

ॐ विश्वतश्चक्षुरुत विश्वतोमुखो विश्वतोबाहुरुतविश्वतस्पात्। सम्बाहुभ्यां धमति सम्पतत्रैर्द्यावाभूमी जनयन् देव एकः॥†
(यजु० अ० १७ मं० १९)

वे एकमात्र परमात्मा पृथिवी और आकाशकी रचना करते समय धर्माधर्मरूप भुजाओं और पतनशील पञ्च महाभूतोंसे संगत होते अर्थात् काम लेते हैं। तात्पर्य यह कि धर्माधर्मरूप निमित्त और पञ्चभूतरूप उपादान करणोंसे अन्य साधनकी सहायता लिये बिना ही सबकी सृष्टि करते हैं। उनके सब ओर नेत्र हैं सब ओर मुख हैं सब ओर भुजायें हैं और सब ओर चरण हैं [अर्थात् सर्वत्र उनकी सभी इन्द्रियाँ हैं, अथवा सब प्राणी परमेश्वरके स्वरूप हैं; अतः उनके जो नेत्र आदि हैं, वे उनमें व्याप्त परमात्माके ही नेत्र आदि हैं]।

इसके पश्चात् बैठकर निम्नाङ्कित विनियोगका पाठ करे—

देवा गातुविद इति मनसस्पतिर्ऋषिर्विराडनुष्टुप्छन्दो वातो देवता जपनिवेदने विनियोगः। फिर—

ॐ देवा गातुविदो गातुं वित्त्वा गातुमित मनसस्पत इमं देव यज्ञꣳस्वाहा वाते धाः॥ (यजु० अ० २ मं० २१)

हे यज्ञवेत्ता देवताओं! आपलोग हमारे इस जपरूपी यज्ञको पूर्ण हुआ जानकर अपने गन्तव्य मार्गको पधारें। हे चित्तके प्रवर्तक परमेश्वर! मैं इस जप-यज्ञको आपके हाथमें अर्पण करता हूँ। आप इसे वायुदेवतामें स्थापित* करें।'

* वाते हि यज्ञोऽवतिष्ठते। तथा च श्रुतिः—वायुरेवाग्निस्तस्माद् यदैवाध्वयुरुत्तमं कर्म करोत्यथैनमेवाप्येति।

इस मन्त्रको पढ़कर नमस्कार करनेके अनन्तर—

अनेन यथाशक्तिकृतेन गायत्रीजपाख्येन कर्मणा भगवान् सूर्यनारायणः प्रीयतां न मम ॥

—यह वाक्य पढ़े। इसके बाद—

उत्तमे शिखरे इति वामदेव ऋषिरनुष्टुप्छन्दः गायत्री देवता गायत्रीविसर्जने विनियोगः।

इस विनियोगको पढ़कर—

ॐ उत्तमे शिखरे देवी भूम्यां पर्वतमूर्धनि। ब्राह्मणेभ्योऽभ्यनुज्ञाता गच्छ देवि यथासुखम् ॥

(तै० आ० प्र० १० अ० ३०)

हे गायत्री देवि अब तुम अपने उपासक ब्राह्मणोंके पाससे उनकी अनुमति लेकर भूमिपर स्थित जो मेरुनामक पर्वत है उसकी चोटीपर विद्यमान जो सुरम्य शिखर है, वही तुम्हारा वासस्थान है, उसमें निवास करनेके लिये सुखपूर्वक जाओ।

इस मन्त्रको पढ़कर गायत्री देवीका विसर्जन करे—

अनेन संध्योपासनाख्येन कर्मणा श्रीपरमेश्वरः प्रीयतां न मम ॥ ॐ तत्सद्ब्रह्मार्पणमस्तु।

फिर भगवान्का स्मरण करे—

यस्य स्मृत्या च नामोक्त्या तपोयज्ञक्रियादिषु।
न्यूनं सम्पूर्णतां याति सद्यो वन्दे तमच्युतम् ॥

श्रीविष्णवे नमः॥ श्रीविष्णवे नमः॥

॥ श्रीविष्णुस्मरणात्परिपूर्णतास्तु। इति ॥

संध्याकालनिर्णय

उत्तमा तारकोपेता मध्यमा लुप्ततारका ।
कनिष्ठा सूर्यसहिता प्रातःसंध्या त्रिधा स्मृता ॥ १ ॥
मध्या मध्याह्ने ॥ २ ॥
उत्तमा सूर्यसहिता मध्यमा लुप्तभास्करा ।
कनिष्ठा तारकोपेता सायंसंध्या त्रिधा स्मृता ॥ ३ ॥

चक्षूपनिषत्

ॐ चक्षुः चक्षुः चक्षुः तेजः स्थिरं भव । मांपाहि पाहि त्वरितं चक्षू रोगान् शमय शमय । ममजातरूपम् तेजो दर्शय दर्शय यथाहम्अन्धो न स्यां तथा कल्पय कल्पय । कल्याणं कुरु कुरु यानि मम पूर्वं जन्मोपार्जितानि चक्षुः प्रतिरोधक दुष्कृतानि सर्वाणि निर्मूलय निर्मूलय । ॐ नमः चक्षुस्तेजो दात्रे दिव्याय भास्कराय । ॐ नमः करुणाकरायामृताय । ॐ नमः सूर्याय ॐ नमोभगवते सूर्यायाक्षितेजसे नमः । खेचराय नमः महते नमः । रजसे नम. । तमसे नमः । असतो मासद्गमय तमसो माज्योतिर्गमय । मृत्योर्मा अमृतं गमय । उष्णो भगवाञ्छुचिरूपः । हंसाभगवान् शुचिप्रतिरूपः । यः, इमांचाक्षुष्मतीं विद्यां ब्राह्मणो नित्यमधीते नतस्याक्षिरोगो भवति । न तस्यकुले अन्धो भवति । अष्टौब्राह्मणान् ग्राहयित्वाविद्या सिद्धिर्भवति ।

अथ शान्ति पाठः

ॐ सहनाववतु सहनौ भुनक्तु सहवीर्यं करवावहै तेजस्विनावधीतमास्तु माविद्विषावहै ।

यज्ञोपवीत संस्कार के विषय में विद्वानों की

व्यवस्था

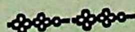
गर्भाष्टमेषु ब्राह्मणमुपनयीत गर्भैकादशेषु राजन्य गर्भद्वादशेषुवैश्यम्-इत्याद्यापस्तम्बस्मृत्या, गर्भाष्टमेऽष्टमेवाऽब्दे ब्राह्मणस्योपनायनम्। राज्ञामेकादशैके विशामेके यथाकुलम्। इति (या० व० स्मृत्या)।

गर्भाष्टमेऽब्दे कुर्वीतब्राह्मणस्योपनायनम्। गर्भादेकादशेराज्ञो गर्भात्तु-द्वादशेविशः। वा आषोऽशाद्ब्राह्मणस्यसावित्रीनातिवर्तते। आद्वाविंशा-त्क्षत्रबन्धोराचतुर्विंशतेर्विशः। २। अतऊर्ध्वं त्रयोऽप्येते यथाकालमसं-स्कृताः। सावित्री पतिताव्रात्या भवन्त्यार्यविगर्हिताः। ३। नैतैरपेतैर्विधि-वदापद्यपिकर्हिचित्। ब्राह्मान्यौनांश्च सम्बन्धानाचरेद्ब्राह्मणःसह। ४। इति-मनुस्मृत्याच तत्समानार्थिकाभिः परश्शतस्मृतिभिः ब्राह्मण्यापरिहत्वणाय-विहिताः संस्काराः करणीया एव श्रौतश्चोपनायनम्। असस्कृताः पति-ताश्चमाभूमेत्यवश्यमल्पेनापिव्ययेन संस्कर्तव्या एव विहितकाले ब्राह्मणादय-इत्यभिप्रयन्ति उद्घोषयन्तिच।

१ परमपूज्य श्री १००८ करपात्र महोदय श्री स्वामी हरिहरानन्द सरस्वती करपात्री मह०
२ श्री स्वामी विश्वरूपाश्रम महाराज जी महन्थ चैसट्टी घाट काशी।
३ श्री स्वामी व्रजभूषणाश्रम जी महन्थ गणेश मठ अस्सी, काशी।
४ श्री स्वामी ओंकारेश्वराश्रम दण्डि स्वामी श्री मधुसूदन मठ, काशी
५ श्री स्वामी कृष्णाश्रम जी
६ श्री स्वामी गंगानन्द तीर्थ मुमुक्षु भवन अस्सी, काशी।
७ महामहोपाध्याय-वाचस्पति श्री गिरिधर शर्मा चतुर्वेदी।
८ श्री पं० सभापति शर्मो पाध्याय-प्रिंसिपल बिरला संस्कृत कालेज

९ „ पं० कालीप्रसाद मिश्र भूतपूर्व प्रिंसिपल सं० का० का० वि० वि०
१० „ पं० कमलाकान्त मिश्र प्रिंसिपल गोइनका सं० कालेज काशी ।
११ „ पं० विश्वनाथ शर्म पाण्डे प्रिंसिपल सं० का० वि० वि० ।
१२ „ पं० रामव्यास पाण्डेय ज्योतिष विभागाध्यक्ष का० वि० वि० ।
१३ „ पं० रामचन्द्र दीक्षित प्रधानाध्यापक सं० का० का० वि० वि०
१४ „ पं० हीरावल्लभ शास्त्री जी प्राध्यापक सं० का० का० वि० वि०
१५ „ पं० निरीक्षणपति मिश्र जी प्राध्यापक सं० का० का० वि० वि०
१६ „ पं० केदारदत्त जोशी प्राध्यापक सं० का० का० वि० वि०
१७ „ पं० राजमोहन शर्मोपाध्याय, पञ्चाङ्ग विभागाध्यक्ष का० वि०वि०
१८ „ पं० काशीप्रसाद मिश्र धर्मशास्त्राचार्य का० वि० वि०
१९ „ पं० अच्युतानन्द झा जी का० वि० वि०
२० „ पं० मङ्गलदत्त जी व्याकरण-वेदाचार्य का० वि० वि०
२१ „ पं० गोपालचन्द्र मिश्र वेदधर्मशास्त्र मीमांसाचार्य का० वि० वि०
२२ „ पं० अम्बिकादत्तो पाध्याय का० वि० वि०
२३ वेदाचार्य श्री पं० भगवत्प्रसाद मिश्र संस्कृत वि० वि० काशी
२४ व्या० वेदान्ताचार्य श्री पं० मुरलीधर मिश्र „ „
२५ न्याय-वेदान्ताचार्य श्री पं० वदरीनाथ शुक्ल „ „
२६ ज्यौतिषाचार्य श्री पं० अवधविहारी मिश्र „ „
२७ श्री पं० गोविन्द पाठक जी „ „
२८ „ पं० विभूतिनाथ त्रिपाठी जी „ „
२९ „ पं० श्रीराम पाण्डेय „ „
३० „ पं० मुकुन्द शास्त्री खिस्ते „ „
३१ „ पं० रमाशंकर पाण्डेय „ „
३२ „ पं० श्रीचन्द्र पाण्डेय „ „
३३ „ पं० कृष्णचन्द्र „ „

३४ ,, पं० के० वी० नीलमेघाचार्य ,, ,,
३५ ,, पं० सत्यनारायण मिश्र ,, ,,
३६ ,, पं० प्रेमवल्लभ त्रिपाठी ,, ,,
३७ ,, पं० मीठालाल ओझा ,, ,,
३८ ,, पं० विन्ध्येश्वरी प्रसाद त्रिपाठी वेदाचार्य ,, ,,
३९ ,, पं० सूर्यकान्त मिश्र सामवेदाचार्य ,, ,,
४० ,, पं० कृष्णदेव जी-ऋग्वेदाध्यापक ,, ,,
४१ ,, पं० कुबेरनाथ पाठक वेदाचार्य-विद्यावारिधि ,, ,,
४२ ,, पं० नन्दलाल शास्त्री एम. ए. एल. बी. प्र. मंत्री ध० शि०मं०
४३ ,, पं० जोखणराम पाण्डेय आहिताग्नि-धर्मसंघ शि० मं० काशी
४४ ,, पं० रामनाथ मिश्र शुक्ल यजुर्वेदाचार्य धर्मसंघ काशी।
४५ ,, पं० श्रीनाथ मिश्र अध्यापक धर्म संघ शिक्षामण्डल काशी।
४६ ,, पं० आदित्यनारायण पाण्डेय धर्मसंघ शिक्षा-मंडल काशी।
४७ ,, पं० चन्द्रदेव द्विवेदी ध० सं० शि० मं० काशी
४८ ,, पं० राममोहन शास्त्री (अध्यक्ष माड़वाड़ी कालेज)
४९ ,, पं० राजनारायण शुक्ल (प्रधान मन्त्री विद्वत् परिषद्)
५० ,, पं० रामभद्र उपाध्याय (अध्यक्ष हृषीकेश पञ्चाङ्ग)
५१ ,, पं० शिवदत्त त्रिपाठी सामवेदाचार्य
५२ ,, पं० गौरीदत्त त्रिपाठी सामवेदाचार्य
५३ ,, पं० दत्तात्रेय जोशी ऋग्वेदाचार्य
५४ ,, पं० रामचंद्र आठवलेकर अथर्ववेद व ऋग्वेदाचार्य
५५ श्री ब्रह्मचारी शशिशेखर
५६ श्री ब्रह्मचारी रामावतार स्वरूप



॥ श्रीअन्नपूर्णादेव्यै नमः ॥

अथ श्रीअन्नपूर्णास्तोत्रम्

नित्यानन्दकरी वराभयकरी सौन्दर्यरत्नाकरी ।
निर्धूताखिलघोरपावनकरी प्रत्यक्षमाहेश्वरी ।
प्रालेयाचलवंशपावनकरी काशीपुराधीश्वरी
भिक्षां देहि कृपावलम्बनकरी माताऽन्नपूर्णेश्वरी ॥ २ ॥
नानारत्नविचित्रभूषणकरी हेमाम्बराडम्बरी
मुक्ताहारविलम्बमानविलसद्वक्षोजकुम्भान्तरी ।
काश्मीराऽगुरुवासिता रुचिकरी काशीपुराधीश्वरी
भिक्षां देहि कृपावलम्बनकरी माताऽन्नपूर्णेश्वरी ॥ २ ॥
योगानन्दकरी रिपुक्षयकरी धर्माऽर्थनिष्ठाकरी
चन्द्रार्कानलभासमानलहरी त्रैलोक्यरक्षाकरी ।
सर्वैश्वर्य-समस्त-वाञ्छितकरी काशीपुराधीश्वरी
भिक्षां देहि कृपावलम्बनकरी माताऽन्नपूर्णेश्वरी ॥ ३ ॥
कैलासाचलकन्दरालयकरी गौरी उमा शङ्करी
कौमारी निगमार्थगोचरकरी ओंकारबीजाक्षरी ।
मोक्षद्वारकपाटपाटनकरी काशीपुराधीश्वरी
भिक्षां देहि कृपावलम्बनकरी माताऽन्नपूर्णेश्वरी ॥ ४ ॥
दृश्याऽदृश्यप्रभूतवाहनकरी ब्रह्माण्डभाण्डोदरी
लीलानाटकसूत्रभेदनकरी विज्ञानदीपाङ्कुरी ।
श्रीविश्वेशमनःप्रसादनकरी काशीपुरापुराधीश्वरी
भिक्षां देहि कृपावलम्बनकरी मातान्नऽपूर्णेश्वरी ॥ ५ ॥

उर्वी सर्वजनेश्वरी भगवती माताऽन्नपूर्णेश्वरी
वेणीनीलसमानकुन्तलहरी नित्यान्नदानेश्वरी ।
सर्वानन्दकरी दृशां शुभकरी काशीपुराधीश्वरी
भिक्षां देहि कृपावलम्बनकरी माताऽन्नपूर्णेश्वरी ॥ ६ ॥
आदिक्षान्तसमस्तवर्णनकरी शम्भोस्त्रिभावाकरी
काश्मीरा त्रिजलेश्वरी त्रिलहरी नित्याङ्कुरा शर्वरी ।
कामाकांक्षकरी जनोदयकरी काशीपुराधीश्वरी
भिक्षां देहि कृपावलम्बनकरी माताऽन्नपूर्णेश्वरी ॥ ७ ॥
देवी सर्वविचित्ररत्नरचिता दाक्षायणी सुन्दरी
वामस्वादुपयोधरप्रियकरी सौभाग्यमाहेश्वरी ।
भक्ताभीष्टकरी दशाशुभकरी काशीपुराधीश्वरी
भिक्षां देहि कृपावलम्बनकरी माताऽन्नपूर्णेश्वरी ॥ ८ ॥
चन्द्रार्कानलकोटिकोटिसदृशी चन्द्रांशुबिम्बाधरी
चन्द्रार्काग्निसमानकुन्तलहरी चन्द्रार्कवर्णेश्वरी ।
माला-पुस्तक-पाश-साङ्कुशधरी काशीपुराधीश्वरी
भिक्षां देहि कृपावलम्बनकरी माताऽन्नपूर्णेश्वरी ॥ ९ ॥
क्षत्रत्राणकरी महाऽभयकरी माता कृपासागरी
साक्षान्मोक्षकरी सदाशिवकरी विश्वेश्वरी श्रीधरी ।
दक्षाक्रन्दकरी निरामयकरी काशीपुराधीश्वरी
भिक्षां देहि कृपावलम्बनकरी माताऽन्नपूर्णेश्वरी ॥१०॥

अन्नपूर्णे सदा पूर्णे शङ्करप्राणवल्लभे ! ।
ज्ञान-वैराग्यसिद्ध्यर्थं भिक्षां देहि च पार्वति ॥११॥
माता च पार्वती देवी पिता देवो महेश्वरः ।
बान्धवाः शिवभक्ताश्च स्वदेशो भुवनत्रयम् ॥१२॥

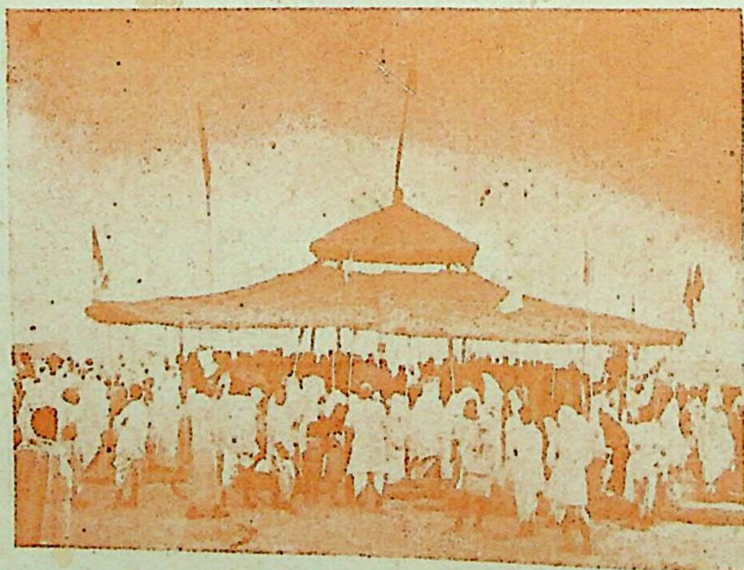
इति श्रीमच्छङ्कराचार्यविरचितम् अन्नपूर्णास्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

मुद्रक—
श्री रामलाल शास्त्री
मोहन प्रेस, कर्णघण्टा, वाराणसी ।



गायत्री-जप-महायज्ञ-समिति

अस्सी संगम, वाराणसी



संयोजकः--

दण्डि स्वामि श्री १०८ शिवरामानन्दतीर्थ